छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय

रिट याचिका संख्या 2227/2005

रामकृष्ण सिंह

बनाम

देवेंद्र सिंह एवं अन्य

आदेश

आदेश के लिए दिनांक 10–11–2006 को सूचीबद्ध किया जाए।

सही /–
धीरेंद्र मिश्रा
न्यायाधीश

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका संख्या 2227/2005

याचिकाकर्ता/वादी: रामकृष्ण सिंह

बनाम

उत्तरवादी /उत्तरवादीगण: देवेंद्र सिंह एवं अन्य

याचिकाकर्ता/वादी हेतु श्री भरत राजपूत, अधिवक्ता,

उत्तरवादी /उत्तरवादीगण हेतु श्री प्रफुल्ल भरत, अधिवक्ता

आदेश

(दिनांक 10/11/06 को पारित)

धीरेंद्र मिश्रा, न्यायमूर्ति

1. याचिकाकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन वर्तमान याचिका द्वारा अनुलग्नक पी/13 के दिनांक 9.5.2005 के आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा विद्वान द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश (एफ.टी.सी.), मुंगेली (छ.ग.) ने सिविल न्यायाधीश, वर्ग–1, मुंगेली द्वारा पारित अनुलग्नक पी/12 के दिनांक 23.6.2003 के आदेश के विरुद्ध दायर विविध सिविल अपील को खारिज कर दिया था, जिसमें याचिकाकर्ता की अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी खारिज कर दी गई थी।

2. इस याचिका के निपटारे के प्रयोजनार्थ मामले के तथ्यों का सारांश निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता है: –

   याचिकाकर्ता, उत्तरवादी संख्या 1 और 4, उत्तरवादी संख्या 3 के पुत्र हैं जबकि श्रीमती परागा बाई (उत्तरवादी संख्या 2, अब मृत) उनकी माता थीं। याचिकाकर्ता ने अनुलग्नक पी/1 का एक सिविल वाद, इस अभिकथन के साथ घोषणा के लिए दायर किया था कि उत्तरवादी संख्या 3 ने वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची में वर्णित वाद भूमि अपनी माता परागा बाई के नाम पर खरीदी थी। उत्तरवादी संख्या 1 और 4 सरकारी कर्मचारी थे। चूंकि याचिकाकर्ता के पिता और माता अपनी वृद्धावस्था और कमजोरी के कारण खेती की देखभाल करने में असमर्थ थे, उन्होंने याचिकाकर्ता को सरकारी सेवा में शामिल न होने के लिए राजी किया और उसे कृषि भूमि में एक बड़ा हिस्सा देने का वादा किया और तदनुसार, वाद दायर करने से लगभग 12 वर्ष पूर्व 4.18

एकड़ भूमि याचिकाकर्ता और उत्तरवादी संख्या 4 की पत्नी के नाम पर नामांतरित की गई थी और तब से उसने कब्जा प्राप्त किया और सिंचाई पंप लगाकर भूमि का विकास किया। हालांकि, याचिकाकर्ता की पीठ पीछे अनुसूची में वर्णित भूमि का उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के बीच राजस्व अधिकारियों की मिलीभगत से आपसी बंटवारा कर लिया गया था। उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के पक्ष में भूमि का बंटवारा भू–राजस्व संहिता की धारा 178 के प्रावधानों और उसके अधीन बनाए गए नियमों के विपरीत होने के कारण शून्य है । हालांकि, शून्य बंटवारे के आधार पर उत्तरवादी गण ने अनुलग्नक पी/6 के तहत भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के अधीन एक अर्जी प्रस्तुत की। तहसीलदार, बिलासपुर ने दिनांक 31.5.2003 के आदेश (अनुलग्नक पी/14) द्वारा उत्तरवादी संख्या 1 और 4 की अर्जी स्वीकार की और यह अभिनिर्धारित किया कि याचिकाकर्ता उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के नाम पर दर्ज भूमि पर अवैध कब्जे में है और इसलिए, उत्तरवादी संख्या 1 और 4 का कब्जा याचिकाकर्ता को बेदखल कर उन्हें सौंप दिया जाए ।

3. उत्तरवादी संख्या 1 और उसकी माता परागा बाई ने अपने लिखित कथनों में वादपत्र के आरोपों का खंडन किया और प्रस्तुत किया कि वास्तव में परागा बाई ने वादग्रस्त भूमि अपने स्वयं के संसाधनों से खरीदी थी और इस प्रकार यह उसकी स्व–अर्जित संपत्ति थी। याचिकाकर्ता ने राजस्व अधिकारियों की मिलीभगत से वादगस्त संपत्ति पर अपना नाम दर्ज करवा लिया था। हालांकि, उसके पक्ष में नामांतरण अपील में अपास्त कर दिया गया था। परागा बाई उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के साथ रह रही थी और उसने अपनी स्व–अर्जित संपत्ति स्वेच्छा से उनके नाम पर अंतरित कर दी थी, इसलिए, वादगस्त भूमि पर याचिकाकर्ता के 1/2 हिस्से के हक का प्रश्न ही नहीं उठता ।

4. याचिकाकर्ता की अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी के उत्तर में यह प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता ने वादगस्त भूमि पर राजस्व अभिलेख में अपना नाम नामांतरित करवा लिया है, जिसके विरुद्ध उत्तरवादी संख्या 1 ने पुनरीक्षण दायर किया था जिसे स्वीकार कर लिया गया था और याचिकाकर्ता के पक्ष में नामांतरण अपास्त कर दिया गया था तथा मामला नए सिरे से न्यायनिर्णयन के लिए तहसीलदार को वापस भेजा गया था। चूंकि याचिकाकर्ता उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के कब्जे में बाधा उत्पन्न कर रहा था, उन्होंने भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के अधीन कार्यवाही शुरू की। इस पर आगे आपत्ति की गई कि घोषणा के लिए साधारण वाद बिना किसी अभिवचन के दायर किया गया है कि याचिकाकर्ता कब्जे में है और स्थायी निषेधाज्ञा की कोई अनुतोष दावा नहीं किया गया है, इसलिए, याचिकाकर्ता के पक्ष में अस्थायी निषेधाज्ञा का आदेश पारित नहीं किया जा सकता। जबकि उत्तरवादी संख्या 3, याचिकाकर्ता के पिता ने याचिकाकर्ता के दावे का समर्थन किया है ।

5. विचारण न्यायालय ने दिनांक 23 जून 2003 के आदेश (अनुलग्नक पी/12) द्वारा अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी को इस निष्कर्ष के साथ खारिज कर दिया कि हक की घोषणा के लिए वर्तमान

वाद बेनामी संव्यवहार (प्रतिषेध) अधिनियम, 1988 (इसके पश्चात् '1988 का अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 4(1) द्वारा वर्जित था क्योंकि याचिकाकर्ता ने वादपत्र में अभिवचन किया है कि उसके पिता मलिकराम ने वाद भूमि अपनी माता परागा बाई के नाम पर खरीदी थी और 1988 के अधिनियम की धारा 4 की उप–धारा 3(क) वर्तमान मामले में लागू नहीं होती क्योंकि मलिकराम की पत्नी परागा बाई हिन्दू अविभाजित कुटुंब में सहदायिक नहीं है, कि वाद अपरिपक्व था क्योंकि इसे परागा बाई के जीवनकाल में स्वामित्व की घोषणा के लिए दायर किया गया है और भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के अधीन कार्यवाही उत्तरवादी संख्या 1 और 4 द्वारा सक्षम राजस्व न्यायालय के समक्ष कब्जा प्राप्त करने के लिए शुरू की गई थी और यदि उनके विरुद्ध कोई निषेधाज्ञा आदेश पारित किया जाता है, तो इससे उत्तरवादी गण को अधिक असुविधा होगी। विद्वान विचारण न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि जहां कब्जे में कोई व्यक्ति बलपूर्वक और अवैध रूप से बेदखल किया जाता है, वह कब्जे के संरक्षण का हकदार है, इसके विपरीत, जहां कोई व्यक्ति बिना किसी विधिपूर्ण हक के कब्जे में है और यदि उसे विधि की प्रक्रिया द्वारा बेदखल किया जाता है, तो ऐसे व्यक्ति का कब्जा संरक्षित नहीं किया जा सकता, इसलिए, याचिकाकर्ता को अपूरणीय क्षति का प्रश्न नहीं उठता।

6. याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील भी अनुलग्नक पी/13 के आदेश द्वारा समान निष्कर्षों के साथ खारिज कर दी गई है ।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दोनों अधीनस्थ न्यायालयों के आदेश मुख्य रूप से अधिनियम, 1988 की गलत व्याख्या पर आधारित हैं। विद्वान सिविल न्यायाधीश ने अधिनियम, 1988 की धारा 4(1) के आलोक में वाद को पोषणीय न मानते हुए वस्तुतः वाद का भविष्य तय कर दिया है। दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने इस तथ्य को नजरअंदाज कर दिया है कि याचिकाकर्ता वादगस्त भूमि के कब्जे में था और तहसीलदार ने अनुलग्नक पी/14 के आदेश द्वारा यह निष्कर्ष दर्ज किए बिना कि याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी संख्या 1 और 4 को वादग्रस्त भूमि से कब बेदखल किया था, भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के प्रावधानों की पूर्ण उपेक्षा करते हुए याचिकाकर्ता को बेदखल कर वाद भूमि का कब्जा उन्हें सौंपने का निर्देश दिया है। याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील को उप–संभागीय अधिकारी ने दिनांक 9.5.2005 के आदेश द्वारा इस आधार पर संक्षेप में खारिज कर दिया है कि वादग्रस्त भूमि के संबंध में एक हक का वाद सिविल न्यायालय के समक्ष लंबित है ।

8. दूसरी ओर, उत्तरवादी गण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रफुल्ल भरत ने प्रस्तुत किया कि दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी को विधि के सुदृढ़ सिद्धांतों पर इस निष्कर्ष को दर्ज करने के पश्चात् खारिज कर दिया है कि याचिकाकर्ता का प्रथम दृष्ट्या मामला नहीं बनता, सुविधा का संतुलन उत्तरवादी गण के पक्ष में है और यदि निषेधाज्ञा पारित किया जाता है तो उत्तरवादी गण को अपूरणीय हानि होगी क्योंकि उन्हें

विधिपूर्ण साधनों से वाद संपत्ति का कब्जा पुनः प्राप्त करने से रोका जाएगा। यह तर्क दिया गया कि भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के अधीन सक्षम राजस्व न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के आधार पर उत्तरवादी गण को कब्जा सौंपा जाना है। उपरोक्त आदेश याचिकाकर्ता को सम्यक् सूचना के पश्चात् पारित किया गया है और याचिकाकर्ता द्वारा दायर अपील संक्षेप में खारिज कर दी गई है और उपरोक्त परिस्थितियों में, अस्थायी निषेधाज्ञा के आदेश की आड़ में, राजस्व न्यायालयों के आदेशों का निष्पादन नहीं रोका जा सकता ।

9. माननीय उच्चतम न्यायालय के **सूर्य देव राय बनाम राम चंद्र राय एवं अन्य** के मामले में **ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 3044** में प्रकाशित किए गए निर्णय पर अवलंब लेते हुए, उत्तरवादी गण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उत्प्रेषण रिट जारी करने और पर्यवेक्षणीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग के प्रयोजनों के लिए यह स्थापित किया जाना चाहिए कि: (i) अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा की गई त्रुटि कार्यवाही के मुख पर प्रकट और स्पष्ट है, जैसे कि जब यह विधि के प्रावधानों की स्पष्ट अज्ञानता या पूर्ण उपेक्षा पर आधारित हो, और (ii) इसके परिणामस्वरूप गंभीर अन्याय या न्याय की घोर विफलता हुई हो। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया;

> "उत्प्रेषण रिट जारी करने की शक्ति और अधीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग विरलता से और केवल उपयुक्त मामलों में किया जाना चाहिए जहां उच्च न्यायालय का न्यायिक विवेक उसे कार्य करने का निर्देश देता है ताकि न्याय की घोर विफलता या गंभीर अन्याय न हो। सावधानी, सतर्कता और विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए, जब अधीनस्थ न्यायालय में किसी वाद या कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान उपरोक्त दो क्षेत्राधिकारों में से किसी को लागू करने का प्रयास किया जाता है और त्रुटि, हालांकि सुधार की आवश्यकता है, फिर भी उसके विरुद्ध दायर अपील या पुनरीक्षण में कार्यवाही के निष्कर्ष पर सुधारी जा सकती है और उच्च न्यायालय के उत्प्रेषण या पर्यवेक्षणीय क्षेत्राधिकार का आह्वान करने वाली याचिका पर विचार करने से वाद या कार्यवाही के सुचारु प्रवाह और/या शीघ्र निराकरण में बाधा उत्पन्न होगी। उच्च न्यायालय हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक महसूस कर सकता है जहां त्रुटि ऐसी है, कि यदि उसी क्षण ठीक नहीं की जाती है, तो बाद के चरण में सुधार के अयोग्य हो सकती है और हस्तक्षेप से इनकार करने पर न्याय का उपहास होगा या जहां ऐसा इनकार स्वयं वाद को लंबा खींचने का कारण बनेगा।"

10. मैंने संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों का अवलोकन किया है जिनके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा दायर अस्थायी निषेधाज्ञा के आवेदन को खारिज कर दी गई है ।

11. विद्वान विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि याचिकाकर्ता का प्रथम दृष्ट्या मामला नहीं बनता है इस आधार पर कि याचिकाकर्ता ने अपने वाद में अभिवाक किया है कि वादग्रस्त भूमि उसके पिता (उत्तरवादी संख्या 3) द्वारा उसकी माता परागा बाई (अब मृत, उत्तरवादी संख्या 2)

के पक्ष में खरीदी गई थी और इस प्रकार, वाद अधिनियम, 1988 की धारा 4(1) के अधीन वर्जित है। विचारण न्यायालय का उपरोक्त निष्कर्ष जिसे बाद में अधीनस्थ अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई है, प्रथम दृष्ट्या अधिनियम, 1988 की गलत व्याख्या पर आधारित प्रतीत होता है। इसके लिए, 1988 के अधिनियम की धारा 3(2)(क) और धारा 4 को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है : –

3. बेनामी संव्यवहारों का प्रतिषेध: – (1) xxxxx xxxxx xxxx xxxxx xxxxx xxxxxxxx xxxxxxx

(2) उप–धारा (1) में अंतर्विष्ट कोई बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी:

(क) किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति का क्रय और यह उपधारणा की जाएगी, जब तक कि प्रतिकूल सिद्ध न किया जाए, कि उक्त संपत्ति पत्नी या अविवाहित पुत्री के फायदे के लिए खरीदी गई थी;

4. बेनामी धारित संपत्ति को पुनः प्राप्त करने के अधिकार का प्रतिषेध।

(1) किसी भी बेनामी धारित संपत्ति के संबंध में कोई अधिकार लागू कराने के लिए कोई वाद, दावा या कार्यवाही उस व्यक्ति के विरुद्ध जिसके नाम पर संपत्ति धारित है या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध ऐसे व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से संस्थित नहीं की जाएगी जो ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करता है।

(2) किसी भी बेनामी धारित संपत्ति के संबंध में किसी अधिकार पर आधारित कोई प्रतिरक्षा, चाहे उस व्यक्ति के विरुद्ध जिसके नाम पर संपत्ति धारित है या किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध, ऐसे व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से किसी वाद, दावे या कार्यवाही में अनुज्ञात नहीं की जाएगी जो ऐसी संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का दावा करता है।

(3) इस धारा में अंतर्विष्ट कोई बात निम्नलिखित को लागू नहीं होगी, –

(क) जहां वह व्यक्ति जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, हिन्दू अविभाजित कुटुंब में सहदायिक है और संपत्ति कुटुंब में सहदायिकों के फायदे के लिए धारित है; या

(ख) जहां वह व्यक्ति जिसके नाम पर संपत्ति धारित है, न्यासी या न्यासिक हैसियत में खड़ा कोई अन्य व्यक्ति है, और संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए धारित है जिसके लिए वह न्यासी है या जिसके प्रति वह ऐसी हैसियत में खड़ा है।

12. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नंद किशोर मेहरा बनाम सुशीला मेहरा** के मामले में **ए.आई.आर. 1995 एस.सी. 2145** में प्रकाशित किए गए निर्णय में धारा 3(2) और धारा 4(1)(2) से निपटते हुए उत्तरवादी की वादपत्र खारिज करने की अर्जी को अस्वीकृत कर दिया और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: –

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

"अधिनियम की धारा 4 की उप–धारा (1) और (2) के अधीन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति के क्रय से संबंधित वर्तमान या पूर्व बेनामी संव्यवहार के संबंध में न तो वाद दायर करना और न ही प्रतिरक्षा लेना प्रतिषिद्ध है। परंतु, यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि जब किसी व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति के क्रय से संबंधित ऐसे बेनामी संव्यवहार के संबंध में कोई वाद दायर किया जाता है या प्रतिरक्षा ली जाती है, तो वह ऐसे वाद या प्रतिरक्षा में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि वह यह सिद्ध न कर दे कि संपत्ति, यद्यपि उसकी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर खरीदी गई थी, यथास्थिति, पत्नी या अविवाहित पुत्री के फायदे के लिए नहीं खरीदी गई थी, क्योंकि धारा 3 की उप–धारा (2) में अंतर्विष्ट सांविधिक उपधारणा यह है कि जब तक प्रतिकूल सिद्ध न किया जाए कि व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी या अविवाहित पुत्री के नाम पर संपत्ति का क्रय, यथास्थिति, उसके फायदे के लिए था।"

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **जी. महालिंगप्पा बनाम जी.एम. सविता** के मामले में **(2005) 6 एस.सी.सी. 441** में प्रकाशित किए गए निर्णय में अधिनियम, 1988 की धारा 3(2) और धारा 4(2) का निराकरण करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है की: –

"24. धारा 3(2) यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट करती है कि यदि कोई संपत्ति अविवाहित पुत्री के फायदे के लिए उसके नाम पर खरीदी जाती है, तो वह केवल एक उपधारणा होगी लेकिन उपधारणा को उस व्यक्ति द्वारा खंडित किया जा सकता है जो न्यायालय के समक्ष साक्ष्य द्वारा या अन्य सामग्री प्रस्तुत करके,संपत्ति का वास्तविक स्वामी होने का अभिकथन कर रहा है, इस मामले में, विचारण न्यायालय के साथ–साथ अपीलीय न्यायालय ने समवर्ती रूप से पाया कि यद्यपि वादग्रस्त संपत्ति उत्तरवादी के नाम पर खरीदी गई थी लेकिन वह अपीलकर्ता के हित के लिए खरीदी गई थी। इसलिए हमारा मत हैं कि भले ही अधिनियम की धारा 3(2) के अधीन उपधारणा पिता (इस मामले में अपीलकर्ता) द्वारा अपनी पुत्री (इस मामले में उत्तरवादी) के नाम पर वाद संपत्ति के क्रय के कारण उत्पन्न हुई हो, वह उपधारणा खंडित हो गई क्योंकि अपीलकर्ता ने यह सिद्ध करने के लिए ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके सफलतापूर्वक सफलता प्राप्त की कि वादग्रस्त संपत्ति उत्तरवादी के बेनामी में उसके स्वयं के फायदे के लिए खरीदी गई थी।"

14. वर्तमान वाद में भी याचिकाकर्ता ने दावा किया है कि वादग्रस्त संपत्ति यद्यपि उसकी माता परागा बाई के नाम पर दर्ज थी लेकिन उसे उसके पिता, उत्तरवादी संख्या 3 मलिकराम द्वारा खरीदा गया था और उसे उसके हिस्से में दिया गया था और तदनुसार, भूमि उसके नाम पर नामांतरित की गई थी। हालांकि, उत्तरवादी गण द्वारा दायर पुनरीक्षण कलेक्टर द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और मामला तहसीलदार को वापस भेजा गया था लेकिन तहसीलदार ने याचिकाकर्ता को सूचना जारी किए बिना अभिलेख को उत्तरवादी संख्या 1 और 4 के नाम पर नामांतरित कर दिया और उसके

पश्चात्, उत्तरवादी गण ने नामांतरित राजस्व अभिलेख के बल पर भू–राजस्व संहिता की धारा 250 के अधीन अर्जी दी और तहसीलदार ने याचिकाकर्ता को बेदखल करने के पश्चात् वादग्रस्त भूमि का कब्जा उत्तरवादी गण को सौंपने का आदेश दिया। उत्तरवादी संख्या 3 मलिकराम ने भी इसी तरह अभिवाक किया है ।

15. इस प्रकार, उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष कि वाद अधिनियम, 1988 की धारा 4(1) के आलोक में वर्जित था, कार्यवाही के मुख पर एक प्रकट और स्पष्ट त्रुटि है और यह विधि के प्रावधानों की स्पष्ट अज्ञानता और पूर्ण उपेक्षा पर आधारित है ।

16. अधीनस्थ न्यायालयों ने अस्थायी निषेधाज्ञा के आवेदन का विनिश्चय करते समय कब्जे के तथ्य में प्रवेश नहीं किया है। वाद 4.1.2002 को दायर किया गया था और अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी याचिकाकर्ता द्वारा 26.10.2002 को दायर की गई थी, हालांकि, इस अर्जी के लंबित रहने के दौरान तहसीलदार ने दिनांक 31.5.2003 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को बेदखल करने के पश्चात् वादगस्त भूमि का कब्जा उत्तरवादी संख्या 1 और 4 को सौंपने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता द्वारा दायर बाद के दस्तावेजों से प्रतीत होता है कि वादग्रस्त का कब्जा याचिकाकर्ता के पास बना रहा और याचिकाकर्ता ने चालू वर्ष में भी फसल बोई है। इसलिए, इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि आक्षेपित आदेश जो विधि के प्रावधानों की स्पष्ट अज्ञानता पर आधारित है, निश्चित रूप से गंभीर अन्याय का कारण बनेगा क्योंकि याचिकाकर्ता को उसके द्वारा बोई गई फसलों से वंचित कर दिया जाएगा ।

17. उपरोक्त परिस्थितियों में, याचिका स्वीकार की जाती है। अनुलग्नक पी–12 के दिनांक 23.6.2003 और अनुलग्नक पी–13 के दिनांक 9.5.2005 के दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेश, जिनके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा दायर अस्थायी निषेधाज्ञा की अर्जी खारिज कर दी गई थी और उसकी अपील भी खारिज कर दी गई थी, अपास्त किए जाते हैं। यह निर्देश दिया जाता है कि वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे के संबंध में यथास्थिति, जैसी कि अनुलग्नक पी–12 के दिनांक 23.6.2003 के आदेश पारित होने की तिथि पर विद्यमान थी, पक्षों द्वारा वाद के निराकरण तक बनाए रखी जाएगी ।

सही /–
धीरेंद्र मिश्रा
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Shaantam Patil